International Journal of Humanities and Social Science Invention (IJHSSI)
ISSN (Online): 2319 – 7722, ISSN (Print): 2319 – 7714
www.ijhssi.org ||Volume 7 Issue 8 Ver. I || August. 2018 || PP 94-97

लय और ताल की भूमिका रस के सन्दर्भ में

डॉ0 प्रभा वार्ष्णेय
एसोसिएट प्रोफेसर, (संगीत विभाग)
श्री टीकाराम कन्या महाविद्यालय,
अलीगढ

सार :–

भारतीय संगीत के संदर्भ में कहा गया है कि श्रुति इसकी जननी है और लय जनक। माँ शिशु का आकार प्रदान करती है उसे अपने अपरिमित स्नेह से आप्लावित करती है। अधिक प्यार और दुलार से माँ बच्चे को बिगाड़ भी सकती है ऐसी स्थिति में पिता नियन्त्रण करता है, जिससे बच्चे का अनुकूल विकास हो सके। स्वतन्त्रता का उद्देश्य तभी सफल हो सकता है जब वह अनुशासित हो। लय अथवा गति के द्वारा संगीत की अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता अनुशासित होती है। परिस्थितिवश मनुष्य के मन में अनेक प्रकार के भाव उत्पन्न होते हैं। इन भावों को ही रस कहते हैं। सम्पूर्ण जगत का आधार लय है। हमारे प्रत्येक कार्य की गति में एक लय है। यदि लय क्षण मात्र भी अपने कार्य से हट जाये तो वह प्रलय का रूप धारण कर लेती है। मानव प्रकृति पर गति का अपरिमित प्रभाव पड़ता है।

भारतीय संगीत में तीन प्रकार की लय का प्रयोग होता है – विलंबित, मध्य एवं द्रुत। मुख्यतः इन तीनों लयों द्वारा ही विभिन्न रसों का सृजन होता है। किसी विद्वान ने ठीक ही कहा है कि अनिवद्ध संगीत या ताल विहीन संगीत आरण्यक संगीत है। ताल संगीत में विभिन्न सौन्दर्यपूर्ण चलन, शैलियों का विकास करता है। ताल संगीत को अनुशासित कर उसके सुगठित रूप, स्थायित्व एवं चमत्कारिता से श्रोताओं को विभोर कर देती है, जहाँ ताल है वहीं उसमें रसी अर्न्तनिहित है। ताल के आघात की गति, वजन और घनत्व मिलकर अलग–अलग रसों को उत्पन्न करते हैं।

संकेत शब्द–रस, लय, ताल, गति

भारतीय संगीत के सम्बन्ध में कहा गया है कि 'श्रुति' इसकी जननी और 'लय' जनक है। इस कथन में बहुत कुछ सत्यता है। संगीत में श्रुति का अर्थ स्वर नलिका से न होकर उन सूक्ष्मतम ध्वनि अन्तरों से है, जिनसे एक सप्तक बनता है। यही श्रुतियाँ संगीत के लिए जननी का कार्य करती हैं। माँ शिशु को आकार एवं रूप प्रदान करती है, उसका पालन–पोषण करती है, उसे अपने अपरिमित स्नेह से आप्लावित करती है। स्नेह की प्रचुरता और अधिक दुलार से माँ बच्चे को बिगाड भी सकती है। ऐसी स्थिति में पिता नियन्त्रण करता है, जिससे बच्चे का अनुकूल विकास हो सके। माँ का पक्ष स्नेह, भावनाओं और स्वतन्त्रता का और पिता का पक्ष इच्छा, मन एवं अनुशासन का प्रतिनिधित्व करता है। विकास से कोई लाभ तभी हो सकता है जब विकास व्यवस्थित हो। स्वतन्त्रता का उददेश्य उसी समय सफल हो सकता है, जबवह अनुशासित हो। लय अथवा गति के द्वारा संगीत की अभिव्यक्ति की स्वतंन्त्रता अनुशासित होती है।

लय तथा ताल द्वारा रस निष्पत्ति को समझने से पूर्व यह जानना आवश्यक है कि रस क्या है :–

रस :– ''गीत, काव्य, वाद्य एवं नृत्य के पृथक–2 अथवा समन्वित रूप में जिस अलौकिक, अनिवर्चनीय आनन्द की अनुभूति होती है और जो श्रोताओं को तन्मयावस्था प्राप्त करा देता है वह ''रस'' है।

परिस्थितिवश मनुष्य के मन में जो अनेक प्रकार के भाव उत्पन्न होते हैं, उसे भी रस कहते हैं।

आनन्द की उपलब्धि मानव जीवन का लक्ष्य है। सौन्दर्य की साधना से आनन्द की सिद्धि होती है और कला सौन्दर्य की साधना ही तो है सौदर्य जब सिद्ध होता है परिपक्व होता तब रस बन जाता है। अतः स्पष्ट है कि रस आनन्द का पर्यायवाची है इसलिए कला का प्राण है।

लय द्वारा रस निष्पत्ति :– लय की साधना से रस को प्राप्त करना ब्रह्मानन्द को प्राप्त करना है तभी ब्रह्म और रस को आचार्यो ने अभिन्न कहा है। रसौवैसाः कहकर रस की परिभाषा दी है और भरतमुनि ने अपने नाट्यशास्त्र में लिखा है – ''विभावानुभाव संचारीसंयोगादृश निष्पत्तिः अर्थात् विभाव, अुनभाव और संचारी के संयोग से रस की निष्पत्ति होती है। साहित्य में इन भावों को 9 भागों में विभक्त किया गया है – श्रंगार, हास्य, करूण वीर, शांत, भयानक, रौद्र, वीमत्स और

अदभुत। योगियों को जिस प्रकार ब्रह्ममानन्द की प्राप्ति होती है उसी प्रकार रसमग्न कलाकार को आनन्द की अनुभूति होती है जिस प्रकार ध्यायी अपने इष्टदेव के स्वरूप के ध्यान में मग्न होकर बाह्य सुध, बुध को भूल जाता है उसी प्रकार गायक, वादक व नर्तक अपने स्वर, ताल और लय के ध्यान में लीन हो जाता है।

सम्पूर्ण जगत का आधार लय है। प्रत्येक गति में एक लय है। यदि लय क्षणमात्र भी अपने कार्य से हट जाये तो वह प्रलय का रूप धारण कर लेगी।

किसी भी दशा में हम इस तथ्य की उपेक्षा नहीं कर सकते कि संवेदन शील प्राणी पर गति का गहन प्रभाव पड़ता है। प्रायः घड़ी की निरन्तर टिक–टिक, थकावट एवं तंद्रा उत्पन्न करती है। हिलते हुये झूले की गति बच्चे को शान्त कर निद्रा मग्न कर देती है। मानव प्रकृति पर गति का अपरिमित प्रभाव पड़ता है।

लय शब्द का सामान्य अर्थ है लीन या विश्रान्ति लय शब्द ली धातु से निष्पन्न हुआ है जिसका अर्थ है 'एक हो जाना' 'एक रूप हो जाना'। जहाँ दो के बीच श्लिष्टता अर्थात् साम्य या एकत्व इस प्रकार सम्पन्न किया जाय कि उनका अन्तराल न कम हो न अधिक वहाँ लय होती है अर्थात् लय गति से निष्पन्न नहीं होती, किन्तु गतियों के बीच जो अन्तराल का साम्य है, उसी से लय बनती है। इसे यों भी कह सकते हैं कि एक क्रिया और दूसरी क्रिया के बीच का काल, जो पहली क्रिया का विस्तार है, वहीं लय है। भारतीय संगीत में लय के तीन प्रकार माने गये हैं :–

1. विलम्वित
2. मध्य
3. द्रुत

मुख्यतः विलम्वित, मध्य, द्रुत इन्हीं तीनों लयों द्वारा ही विभिन्न रसों का सृजन होता है। शास्त्राधार है कि विलम्वित लय में करूण, मध्य लय में शान्त, हास्य व श्रृंगार और द्रुत लय में रौद्र, वीभत्स, भयानक, वीर एवं अदभुत रसों का सफलता पूर्वक प्रदर्शन होता है। कलाकार विभिन्न लयों के माध्यम से ऐसा चमत्कार दिखाता है कि मनुष्य के हृदय में भाव जागृत होते हैं तब उसे रस या आनन्द की अनुभूति होती है। संगीत में उचित स्वर ताल, लय के परस्पर सम्बन्ध से ही वास्तविक रस उत्पन्न किया जा सकता है। इनमें से एक की भी गौढ़ता रसोत्पादन में सहायक सिद्ध होती है। जहाँ तक गायन का सम्बन्ध है वहाँ गायन के विभिन्न माध्यम रसोत्पत्ति में सहायक सिद्ध होते हैं। उदाहरण के लिए, जैसे कोई कलाकार राग गाता है उसमें पहले वह विलम्बित ख्याल गाता है उसके बाद मध्य लय में द्रुत ख्याल उसके बाद अति द्रुत लय में तराना या अन्य गायकी प्रस्तुत करता है। इस प्रकार वह अलग–अलग लय की गायकी प्रस्तुत करके विभिन्न रसों का आस्वादन कराता है। प्रत्येक रचना का अपना काल, (प्रमाण) लय होता है। कुछ रचनायें मध्य लय की होती हैं जिसका अर्थ है कि मध्य लय उन रचनाओं के लिए अधिक उपयुक्त है। इसी प्रकार हम मध्य लय और द्रुत लय की रचनाओं के सम्बन्ध में सुनते हैं। यदि किसी मध्य लय की रचना को विलम्वित लय में गाया जाए तो वह उतनी प्रभावोत्पादक नहीं होगी, जितनी मध्य लय में गाये जाने से।

लय द्वारा रस निष्पत्ति बहुत कुछ कंठ ध्वनि एंव वाद्यों की प्रकृति पर निर्भर करती है। ठीक – ठीक रसोत्पत्ति के लिए आवश्यक है किवीणा में लय कुछ विलम्वित करने और वंशी में द्रुत करने की आवश्यकता है। वंशी पर किसी मध्य लय की रचना को विलम्वित लय में बजाना उस रचना की सरसता लालित्य को क्षत विक्षत करना होगा। इसी प्रकार उपयुक्त रसोत्पत्ति के लिए कंठ स्वरों को द्रुत लय प्रधान करना वांछनीय होगा, जबकि कुछ अन्य लोगों कंठ–स्वर यदि विलम्वित लय प्रधान कर दिया जाए तो अधिक प्रभावोत्पादक होगा।

तालों द्वारा रस निष्पत्ति :–किसी विद्वान ने ठीक ही कहा है कि अनिबद्ध या ताल विहीन संगीत आरण्यक संगीत है तथा निबद्ध या तालयुक्त, संगीत सामाजिक संगीत है। संगीत में छन्द और ताल ही यर्थाथतः स्वरों को गति प्रदान करते हैं। काल क्रिया के माप को ही ताल कहते हैं। जैसा कि 'अमरकोष' में उल्लखित है :– ''तालः काल क्रियामानम्।'' ताल संगीत को एक निशिचित नियम या समय के बन्धन में बांधता है। जिस प्रकार जीवन में निश्चित समय क्रम का आभाव सुख और समृद्धि का अभाव है, उसी प्रकार तालविहीन, विश्रृंखल संगीत में सार्थकता नहीं। ताल, संगीत, में विभिन्न सौन्दर्यपूर्ण चलन शैलियों का विकास करता है, जिससे संगीत में संयम की रक्षा होती है। ताल संगीत को अनुशासित कर उसके सुगठित रूप, स्थायित्व एवं चमत्कारिकता से श्रोताओं को विभोर कर देता है। तालों में गतिभेद उत्पन्न करके रस निष्पत्ति सम्भव है। करूण, श्रृंगार, रौद्र, वीमत्स आदि रसों के लिए तालों की विभिन्न गतियों का विशेष महत्व है।

रस और भाव की उत्पत्ति के लिए स्वर तो समर्थ होते ही हैं, परन्तु लय और ताल के विविध रूप भी कम सक्षम नहीं होते। तबला या अन्य किसी ताल–वाद्य से जब स्वरों का अनुगमन किया जाता है तो भावाद्रेक शीघ्रता से होता है। अति विलम्बित, मध्य, द्रुत और अतिद्रुत गतियों के द्वारा ताल के विभिन्न रूप अलग–अलग रसों को उत्पन्न करते हैं। विविध लय स्वरूपों का जन्म मानव सभ्यता के दीर्घकालीन चिन्तन का परिणाम है और समृद्ध वैचारिक सम्पत्ति का परिचायक है।

जहाँ ताल है वहीं उसमें रस अंतनिर्हित है। ताल के आघात की गति, वजन और घनत्व मिलकर ताल के द्वारा अलग–अलग रसों को उत्पन्न करते हैं।

भाषा विज्ञानियों ने उच्चारण स्थान की दृष्टि से व्यंजन ध्वनियों के दस भेद किए हैं यथा स्वर, यंत्रमुखी, काकल्य, उहलि, जिव्हीय, कष्ठ्य, लूर्धन्ध, तालव्य, वत्सर्य, दन्तय और द्वयोष्ठय। इसी प्रकार संगीत के वाद्याचार्यो ने विविधतालवाद्यों से उत्पन्न होने वाले पाटाक्षरों का निर्माण करके प्रयोग की विधि बताई है। जिस प्रकार व्यंजनो से शब्द और शब्दों से वाक्य की रचना होती है और वाक्य का अर्थ रसोद्रेक में कारण होता है, उसी प्रकार पाटाक्षरों के संयोग से ताल वाद्यों के बोल बनते हैं और बोलों से विभिन्न गतियों या चालों का स्वरूप निर्मित होकर एक निश्चित रस का आविर्भाव होता है। उत्कृष्ट तबला–वादक इन चालों के सम्यक प्रयोग से गीत के विश्राम काल और उत्थान काल में ऐसा सौन्दर्य भर देते हैं कि गीत और उसके अनुवर्ती अन्य वाद्यों को समुचित भाव और रस उत्पन्न करने में सहायता मिलती है। श्रोताओं के मुख से वाह और हृदय से आह निकल पड़ती है। पाटाक्षरों के अधिक जटिल और परिष्कृत रूप से तबला–वादन में चमत्कार की सृष्टि होने लगती है। श्रोता आनन्द सागर में डूबते हुए स्तब्ध रह जाते हैं।

कुछ प्रचलित तालों को नीचे दी गई तालिका के अनुसार नौ रसों में विभक्त किया जा सकता है –

रस	ताल	गति
1. श्रंगार रस	तीन, सात और आठ मात्रा वाली तालें जैसे –दारा, रूपक, कहरवा आदि	मंद, ललित और कोमल गति स्वच्छंद भाव
2. करूण रस	सात, मात्रा वाली तालें जैसे –रूपक आदि	विलम्वित लय प्रधान, शिथिल गति युक्त
3. वीर रस	दस, बारह और चौदह मात्रा वाली तालें जैसे–सूल ताल, चारताल और आड़ा चारताल आदि।	गौरव गति से युक्त आवेग पूर्ण द्रुत लय।
4. भयानक रस	बारह और चौदह मात्रा वाली तालें जैसे–चारताल, धमारताल, आदि	भयत्रासित स्खलित गति युक्तमध्य लय
5. हास्य रस	चार व पाँच मात्रा वाली तालें जैसे प्राचीन एकताल, चक्रताल और द्रुत कहरवा आदि	विषम और विक्षिप्त गति।
6. रौद्र रस	बारह और चौदह मात्रा वाली तालें जैसे चारताल, धमार ताल आदि।	अति द्रुत लय युक्त प्रचण्ड गति।
7. वीभत्स रस	अनियमित मात्राओं वाली कोई भी सम–विषम ताल स्वरूप।	संकोच गतियुक्त अनियन्त्रित लय।
8. शान्त रस	बारह और चौदह मात्रा वाली तालें जैसे–एकताल व झूमरा ताल आदि।	स्थिर या अचंचल गति।

उपुर्यक्त ताल सुझाव मात्र है तबले के बोलों का वजन, ताल की गति, खाली भरी के स्थान परिवर्तन, दाये–बाये से परिवर्तित स्वरूप, पात निपात की प्रक्रिया, लकीले वादक की उंगलियों का समुचित स्पर्श और तात्कालिक सूझ–बूझ से किसी भी ताल को इच्छित प्रभाव उत्पन्न करने के लिये इच्छित रस के अनकूल बनाया जा सकता है। हास्य रस उत्पन्न करने के लिये तबला वादक कभी–कभी दायें तबलें की स्याही पर हथौड़ी का स्पर्श कराकर विचित्र सी ध्वनि पैदा कर देते हैं। इसी प्रकार चमत्कार उत्पन्न करने के लिये अति द्रुत रूप विधान की प्रस्तुति की जा सकती है।

लय और ताल के द्वारा समग्र प्रकृति के व्यवस्था का लघु चित्रण किया जा सकता है। प्राचीन काल में रंग मंच पर जब कोई नाटक खेला जाता है तो अकेला वादक दृश्य और अभिलेखाओं के अनुसार दाएँ और बाएँ तबले पर आघातों द्वारा प्रत्येक भाव को रस को सफलता के साथ प्रदर्शित कर दिया करता है। नायक– नायिका की अवस्था,

आंधी–तूफान और आग लगने का प्रभाव, विदूषक की क्रीडाऐं, युद्ध का कोलाहल, राजा–चोर, देव–दानवों का प्रादर्भाव, हास्य रूदन सभी कुछ तबला वादक की कुशलता से सजीव कर दिये जाते हैं। उनका तबला बजता नहीं था बल्कि बोलता था।

वादन में पाटाक्षर शुद्ध और स्पष्ट हो, ध्वनि में निरंतरता बनी रहे, दाब खाँख (उपयुक्त वजन) का ध्यान रहे और भावना में डूबकर लचीली उंगलियों का प्रहार किया जाये तो किसी भी ताल वाद्य के वादन से रस की सृष्टि की जा सकती है। अनुद्रुत, द्रुत, लघु, गुरू, प्लुत, और काकपद नामक ताल के अंगों और ताल की जातियों का सम्यक ज्ञान भी वादक को होना चाहिए। जो ताल और रस के अवलम्ब हैं जैसे–भोजन में एक कंकड़ी उसे वेस्वाद बना देती है उसी तरह वादन में भी एक गलत आघात कला को किसकिसा कर सकती है।

इस प्रकार ताल और लय की गतियाँ रस संचार करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती हैं। श्रोताओं को एकाग्र करने में सरकत के सभी करतब ताल के आश्रित होते हैं। वहाँ क्रीड़ाओं की विविधता के अनुसार समस्त रसों का आविर्भाव–त्रिरोभाव होता रहता है।

संदर्भ :–

1. संगीत पत्रिकाएँ
2. संगीत विशारद–श्री लक्ष्मी नारायण गर्ग
3. छात्राओं से वार्तालाप
4. निबन्ध संगीत–श्री लक्ष्मी नारायण गर्ग
5. संगीत शिक्षण–श्रीमती सरिता उप्पल